5

ब्रिटिश भारत में शिक्षा

[EDUCATION IN BRITISH INDIA]

(1813-1857)

"The company was empowered to perform all the state functions—executive, judicial, legislative and economic." —**Dr. Balkrishna**

विषय-प्रवेश
(INTRODUCTION)



अंगलिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को रानी एलिजाबेथ प्रथम (Queen Elizabeth I) से 31 दिसम्बर, सन् 1600 ई० को पूर्वी देशों से व्यापार करने के लिये 'आज्ञा-पत्र' (Charter) प्राप्त हुआ था। उस समय से लेकर लगभग 150 वर्ष तक कम्पनी का मुख्य उद्देश्य व्यापार करना था। किन्तु, यूरोप की अन्य व्यापारिक कम्पनियों के समान उसे थोड़ा-बहुत धर्म-प्रचार का कार्य भी करना पड़ा।

सन् 1757 में प्लासी की विजय और सन् 1765 में शाह आलम से बंगाल, बिहार और उड़ीसा की 'दीवानी' प्राप्त करने के पश्चात्, इस देश के पर्याप्त भू-भाग के शासन की बागडोर कम्पनी के हाथ में आ गई और उसकी सत्ता ने राजनीतिक रूप धारण किया। अपनी इस सत्ता को चिरस्थायी बनाने के लिये, कम्पनी द्वारा भारतीयों की शिक्षा के प्रति ध्यान दिया जाना अनिवार्य हो गया। यहीं से इंगलिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी की भारतीय शिक्षा-नीति का आरम्भ होता है।

1813 का आज्ञा-पत्र
(CHARTER OF 1813)

इंगलिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के 'आज्ञा-पत्र' का प्रत्येक 20 वर्ष के पश्चात् ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा पुनरावर्तन किया जाता था। इस उद्देश्य से सन् 1813 में 'आज्ञा-पत्र' को पार्लियामेण्ट के समक्ष प्रस्तुत किया गया। उस अवसर पर घोर विरोध होते हुए भी ग्रांट और विल्बरफोर्स के दल को विजय प्राप्त हुई। सन् 1813 के 'आज्ञा-पत्र' में अग्रांकित धारा को जोड़कर भारत में शिक्षा-प्रसार का उत्तरदायित्व कम्पनी के ऊपर रखा गया—**"साहित्य के पुनरुद्धार और समुन्नति के लिये भारतीय विद्वानों को प्रोत्साहित करने के लिये और भारत में ब्रिटिश प्रदेशों के निवासियों में विज्ञानों के ज्ञान**

Scanned with CamScanner

का प्रसार एवं विकास करने के लिये प्रति वर्ष कम-से-कम एक लाख रुपये की धनराशि पृथक् रखी जायेगी और व्यय की जायेगी।"

".....a sum of not less than one lac of rupees in each year shall be set apart and applied to the revival and improvement of literature and encouragement of the learned natives of India and for the introduction and promotion of knowledge of sciences among the inhabitants of the British territories in India." —**Charter of 1813, Section 43**

इस धारा का भारतीय शिक्षा के इतिहास में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके कारण ग्रांट और विल्बरफोर्स द्वारा लगभग बीस वर्ष तक चलाये जाने वाले आन्दोलन की इतिश्री हुई। इसने भारतीयों की शिक्षा को कम्पनी का उत्तरदायित्व बताया। इसने भारत में अंग्रेजी शिक्षा-प्रणाली का सूत्रपात करके, भारतीय शिक्षा को एक नई दिशा में मोड़ा। **नूरुल्ला व नायक** के अनुसार—**"1813 के आज्ञा-पत्र ने भारतीय शिक्षा के इतिहास को एक नई दिशा में मोड़ा।"**

प्राच्य-पाश्चात्य विवाद
(ORIENTAL-OCCIDENTAL CONTROVERSY)

सन् 1813 के "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा ने भारतीयों की शिक्षा का उत्तरदायित्व कम्पनी पर रखा और उसे उनकी शिक्षा पर प्रति वर्ष कम-से-कम एक लाख रुपये की धनराशि व्यय करने का आदेश दिया। किन्तु "धारा" में इस बात का स्पष्टीकरण नहीं किया गया था कि यह धनराशि किस प्रकार की शिक्षा पर व्यय की जाये—प्राच्य शिक्षा पर या पाश्चात्य शिक्षा पर ? फलतः इस प्रश्न को लेकर कम्पनी के कर्मचारियों में शिक्षा के स्वरूप के विषय में विवाद उठ खड़ा हुआ। इस विवाद को **"प्राच्य-पाश्चात्य विवाद"** की संज्ञा दी गई है। इस विवाद में भाग लेने वाले दो मुख्य दल थे—प्राच्यवादी और पाश्चात्यवादी (Orientalists and Occidentalists)।

विवाद का मुख्य कारण (Main Cause of Controversy)—विवाद का मुख्य कारण सन् 1813 के "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा में प्रयोग किये गये दो शब्द थे—"साहित्य" और "भारतीय विद्वान"। प्राच्यवादियों और पाश्चात्यवादियों ने इन दोनों शब्दों की व्याख्या दो विभिन्न प्रकार से की। इस व्याख्या पर प्रकाश डालते हुए **डॉ० श्रीधरनाथ मुखोपाध्याय** ने लिखा है—"प्राच्यवादियों का कहना था कि इस धारा के 'साहित्य' शब्द के अन्तर्गत आते हैं—केवल 'अरबी और संस्कृत साहित्य' एवं 'भारतीय विद्वान' का अर्थ है—इन दोनों भाषाओं में से किसी भी एक भाषा का भारतीय विद्वान्। पाश्चात्यवादियों का मत था कि इन दोनों शब्दों का अर्थ इतना संकीर्ण नहीं है। 'साहित्य' में अंग्रेजी का भी विशेष स्थान है।

प्राच्यवादी (Orientalists)—प्राच्यवादी दल में कम्पनी के पुराने और अनुभवी कर्मचारी थे। इसमें सर्वप्रथम स्थान वारेन हेस्टिंग्ज और जोनाथन डंकन का था, जिन्होंने "कलकत्ता मदरसा" और "बनारस संस्कृत कॉलेज" की सृष्टि करके, प्राच्यवादी नीति के पक्ष में अपना मत प्रकट किया था। लार्ड मिण्टो भी इसी नीति का पोषक था। इस नीति को बंगाल की "लोक-शिक्षा-समिति" (General Council of Public Instruction) के अधिकांश सदस्यों का समर्थन प्राप्त था। इन सदस्यों में दो मुख्य थे—"समिति" का मन्त्री, विल्सन (H. H. Wilson) और बंगाल का शिक्षा-सचिव, प्रिन्सेप (H. T. Prinsep)। प्रिन्सेप प्राच्यवादी दल का नेता भी था।

कम्पनी के उपरिलिखित सभी कर्मचारी और प्राच्यवादी-नीति के अन्य पोषक, उच्च कोटि के कूटनीतिज्ञ थे। उनकी धारणा थी कि भारतवासियों को विभाजित रख कर ही उन पर शासन किया जा सकता था। अतः वे इस देश के निवासियों को अरबी, फारसी और संस्कृत पर आधारित शिक्षा प्रदान करके, विभिन्न धर्मों और जातियों में विभाजित रखना चाहते थे। विल्सन इस बात का घोर विरोधी था कि भारतीय अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त करके, उसके देशवासियों से समानता करने का दावा करें। प्रिन्सेप का दृढ़ विचार था कि भारतीयों में अंग्रेजी पर अधिकार प्राप्त करने की क्षमता नहीं है।

Scanned with CamScanner

अन्य प्राच्यवादियों ने भारतीयों को अंग्रेजी की शिक्षा दिये जाने के विपक्ष में तीन तर्क प्रस्तुत किये। **पहला,** भारत में पाश्चात्य ज्ञान और विज्ञानों का प्रसार करने से इस देश की प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का लोप हो जायेगा। **दूसरा,** भारत में अंग्रेजी शिक्षा को प्रोत्साहन देने से उस भारतीय साहित्य का विनाश हो जायेगा, जिसमें अनेक युगों का ज्ञान संचित है। **तीसरा, टी० एन० सिक्वेरा** के अनुसार—**"जब भारतीयों की अपनी स्वयं की एक प्राचीन और भव्य संस्कृति है, तब उनको देश की भाषा और साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिये बाध्य करना दोषपूर्ण नीति है।"**

प्राच्यवादियों ने उपर्युक्त तर्क उपस्थित करके, इस बात पर बल दिया कि भारतीयों की प्राचीन शिक्षा, साहित्य और संस्कृति को सुरक्षित रखना आवश्यक है। अतः उनकी शिक्षा-प्रणाली को प्रोत्साहित किया जाये और उनमें पाश्चात्य ज्ञान का कदापि प्रसार न किया जाये।

पाश्चात्यवादी (Occidentalists)—पाश्चात्यवादी दल में कम्पनी के नवयुवक कर्मचारी और मिशनरी थे। वे सम्पूर्ण देश में यत्र-तत्र बिखरे हुए थे। इसलिये, दल का न तो कोई संगठित स्वरूप था और न उनका कोई नेता ही था। फिर भी, उन्होंने प्राच्यवादियों की नीति का जमकर विरोध किया। उन्होंने यह विचार प्रकट किया कि प्राच्य शिक्षा-प्रणाली मरणासन्न अवस्था को प्राप्त कर चुकी है और उसे पुनर्जीवन प्रदान करना मानव-प्रयास से बाहर की बात है। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह घोषित किया कि अरबी, फारसी और संस्कृत के साहित्यों में पुरातन और निरर्थक विचारों के सिवा किसी प्रकार का उपयोगी ज्ञान नहीं मिलता है। अतः भारतीयों का मानसिक विकास करने के लिये उनको अंग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य ज्ञान और विज्ञानों से अवगत कराया जाना परम आवश्यक है।

यहाँ इस बात का उल्लेख करना असंगत न होगा कि पाश्चात्यवादियों ने भारतीयों में यूरोपीय ज्ञान और विज्ञान के प्रसार का समर्थन किसी निस्वार्थ भावना से नहीं, वरन् निज हित की भावना से प्रेरित होकर किया। उन्हें अपने व्यापारिक और प्रशासकीय कार्यालयों के लिये अंग्रेजी शिक्षित "बाबू-वर्ग" की आवश्यकता थी। उन्हें यह बात असह्य थी कि उनके देशवासी, इंग्लैण्ड से आकर इस निम्न वर्ग में सम्मिलित हों। अतः उन्होंने यही अधिक विवेकपूर्ण समझा कि भारत में अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार, करके "बाबू-वर्ग" का निर्माण किया जाये।

इस प्रकार, प्राच्यवादियों और पाश्चात्यवादियों का विवाद सन् 1834 तक चलता रहा। अन्त में, जनवरी, 1835 में 'लोक-शिक्षा समिति' के मन्त्री ने दोनों दलों के वक्तव्यों को भारत में तत्कालीन गवर्नर-जनरल लार्ड विलियम बैंटिंक (Bentinck) के सम्मुख निर्णयार्थ प्रस्तुत किया।

मैकॉले का विवरण-पत्र, 1835
(MACAULAY'S MINUTE, 1835)

10 जून, सन् 1834 को लार्ड मैकॉले (Macaulay) ने गवर्नर-जनरल की कौंसिल के "कानून-सदस्य" के रूप में भारत में पदार्पण किया। उस समय तक "प्राच्य-पाश्चात्य विवाद" उग्रतम रूप धारण कर चुका था। बैंटिंक का विश्वास था कि मैकॉले जैसा प्रकाण्ड विद्वान ही इस विवाद को समाप्त कर सकता था। इस विचार से उसने मैकॉले को बंगाल की "लोक-शिक्षा समिति" का सभापति नियुक्त किया। फिर, उसने मैकॉले से सन् 1813 के "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा में अंकित एक लाख रुपये की धनराशि को व्यय करने की विधि और अन्य विवादग्रस्त विषयों के सम्बन्ध में कानूनी सलाह देने का अनुरोध किया। साथ ही, उसने "समिति" के मन्त्री को प्राच्यवादी और पाश्चात्यवादी दलों के वक्तव्यों को मैकॉले के समक्ष उपस्थित करने का आदेश दिया।

मैकॉले ने सर्वप्रथम "आज्ञा-पत्र" की उक्त धारा और दोनों दलों के वक्तव्यों का सूक्ष्म अध्ययन किया। तदुपरान्त, उसने तर्कपूर्ण और बलवती भाषा में अपनी सलाह को अपने प्रसिद्ध "विवरण-पत्र" में लेखबद्ध करके, 2 फरवरी, सन् 1835 को बैंटिंक के पास भेज दिया। हम मैकॉले के 'विवरण-पत्र' के दो प्रमुख अंशों का वर्णन कर रहे हैं, यथा—

Scanned with CamScanner

(1) 43वीं धारा की व्याख्या (Interpretation of 43rd Section)—मैकॉले ने अपने "विवरण-पत्र" में सन् 1813 के "आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा की निम्नलिखित प्रकार से व्याख्या की है—

1. एक लाख रुपये की धनराशि व्यय करने के लिये सरकार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। वह इस धनराशि को अपनी इच्छानुसार किसी प्रकार भी व्यय कर सकती है।

2. "साहित्य" शब्द के अन्तर्गत केवल अरबी और संस्कृत साहित्य ही नहीं, अपितु अंग्रेजी साहित्य भी सम्मिलित किया जा सकता है।

3. "भारतीय विद्वान्" मुसलमान मौलवी एवं संस्कृत के पण्डित के अलावा अंग्रेजी भाषा और साहित्य का विद्वान भी हो सकता है।

(2) अंग्रेजी के पक्ष में तर्क (Arguments in Favour of English)—"आज्ञा-पत्र" की 43वीं धारा की व्याख्या करने के बाद मैकॉले ने प्राच्य-शिक्षा एवं साहित्य का प्रबल खण्डन और अंग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य ज्ञान और विज्ञानों की शिक्षा का शक्तिशाली समर्थन किया। सर्वप्रथम, **मैकॉले** ने भारतीय भाषाओं को अध्ययन के लिये पूर्णतया निरर्थक बताते हुए लिखा—**"भारत के निवासियों में प्रचलित देशी भाषाओं में साहित्यिक तथा वैज्ञानिक ज्ञान-कोष का अभाव है और वे इतनी अविकसित तथा गँवारू हैं कि जब तक उनको बाह्य भण्डार से सम्पन्न नहीं किया जायेगा, तब तक उनसे किसी भी महत्त्वपूर्ण पुस्तक का सरलता से अनुवाद न हो सकेगा।"**

भारतीय भाषाओं की निरर्थकता सिद्ध करने के पश्चात् **मैकॉले** ने अरबी, फारसी और संस्कृत की अपेक्षा अंग्रेजी को कहीं अधिक उच्च स्थान देते हुए लिखा—**"एक अच्छे यूरोपीय पुस्तकालय की एक अल्मारी का भारत और अरब के सम्पूर्ण साहित्य से कम महत्त्व नहीं है।"**

"A single shelf of a good European library was worth the whole native literature of India and Arabia."

—**Macaulay's** *Minute*

इस प्रकार अरबी, फारसी और संस्कृत के अध्ययन क्षेत्र से बाहर निकालकर, मैकॉले ने अंग्रेजी को उनकी अपेक्षा अधिक समृद्ध बताया और उसके अध्ययन के पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिये—

1. अरबी और संस्कृत की तुलना में अंग्रेजी अधिक उपयोगी है, क्योंकि यह नवीन ज्ञान की कुंजी है।

2. अंग्रेजी इस देश के शासकों की भाषा है, भारत के उच्च वर्गों द्वारा बोली जाती है और पूर्वी समुद्रों में व्यापार की भाषा बन सकती है।

3. जिस प्रकार लेटिन एवं यूनानी भाषाओं से इंग्लैण्ड में और पश्चिमी यूरोप की भाषाओं से रूस में पुनरुत्थान हुआ, उसी प्रकार अंग्रेजी से भारत में होगा।

4. भारतवासी अरबी और संस्कृत की शिक्षा की अपेक्षा अंग्रेजी की शिक्षा के लिये अधिक उत्कंठित हैं।

5. भारतवासियों को अंग्रेजी का अच्छा विद्वान बनाया जा सकता है और हमारे प्रयास इसी दिशा में होने चाहिये।

6. अंग्रेजी की शिक्षा द्वारा इस देश में एक ऐसे वर्ग का निर्माण किया जा सकता है जो रक्त और रंग में भले ही भारतीय हो, पर रुचियों, विचारों, नैतिकता और विद्वता में अंग्रेज होगा।

"It is possible through English education to bring about a class of persons, Indian in blood and colour but English in tastes, in opinions, in morals and in intellect."

—**Macaulay, H. Shary,** *ed.* Macaulay's *Minute, Selection from Educational Records,* Part I, p. 117.

उपर्युक्त तर्कों के आधार पर मैकॉले ने यह मत व्यक्त किया कि प्राच्य-शिक्षा की संस्थाओं पर धन व्यय करना मूर्खता है और इनको बन्द कर दिया जाये। इनके स्थान पर अंग्रेजी भाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने के लिये संस्थाओं की सृष्टि की जाये। अंग्रेजी भाषा का यशगान और समर्थन करते हुए **मैकॉले** ने कहा—**"अंग्रेजी पश्चिम की भाषाओं में भी सर्वोपरि है। जो व्यक्ति अंग्रेजी भाषा**

Scanned with CamScanner

जानता है, वह उस विशाल ज्ञान-भण्डार को सुगमता से प्राप्त कर लेता है जिनकी विश्व की सबसे बुद्धिमान जातियों ने रचना की है।"

"English stands pre-eminent even among the languages of the west. Whoever knows the English language has ready access to all the vast intellectual wealth, which all the wisest nations of the earth have created." —**Macaulay's** *Minute*

बैंटिंक द्वारा विवरण-पत्र की स्वीकृति, 1835
(BENTINCK'S APPROVAL OF THE MINUTE, 1835)

लार्ड विलियम बैंटिंक ने मैकॉले के "विवरण-पत्र" में व्यक्त किये गये सभी विचारों का अनुमोदन किया। तदुपरान्त 7 मार्च, सन् 1835 को एक विज्ञप्ति (Proclamation) द्वारा, उसने सरकार की शिक्षा-नीति को अग्रांकित शब्दों में घोषित किया—**"शिक्षा के लिये निर्धारित सम्पूर्ण धन का सर्वोत्कृष्ट प्रयोग केवल अंग्रेजी की शिक्षा के लिये ही किया जा सकता है।"**

"All government fund appropriated for the purposes of education would be best employed on English education alone." —*Government Proclamation of* 1835

इस विज्ञप्ति ने कम्पनी की शिक्षा-नीति में सहसा परिवर्तन करके भारतीय शिक्षा के इतिहास में एक नया मोड़ दिया। **टी० एन० सिक्वेरा** के शब्दों में—**"इस विज्ञप्ति ने भारत में शिक्षा के इतिहास को एक नया मोड़ दिया। यह उस दिशा के विषय में, जो सरकार सार्वजनिक शिक्षा को देना चाहती थी, निश्चित नीति की प्रथम सरकारी घोषणा थी।"**

एडम रिपोर्ट
(ADAM'S REPORT)

19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में प्रचलित देशी शिक्षा-व्यवस्था की जाँच की गई। केवल मद्रास, बम्बई तथा बंगाल प्रान्तों में जाँच का कार्य हुआ। मद्रास से सर टॉमस मुनरो (Sir Thomas Munro) ने सन् 1822 में यह कार्य करवाया। बम्बई के गवर्नर एल्फिन्स्टन (Elphinstone) ने शिक्षा की जाँच जिलाधीशों के माध्यम से करवाई। परन्तु लार्ड विलियम बैंटिंक ने विलियम एडम (William Adam) नामक मिशनरी द्वारा करवाई। एडम ने अपने तीन प्रतिवेदन 1835 से 1838 तक सरकार के समक्ष प्रस्तुत किये।

(1) एडम की प्रथम रिपोर्ट—एडम की प्रथम रिपोर्ट संक्षिप्त है और उसमें शिक्षा सम्बन्धी समस्त उपलब्ध आँकड़े दिये गये हैं। इस रिपोर्ट के आधार पर **बसु** ने लिखा है—"प्राथमिक शिक्षा जन-साधारण के लिये थी। यह एक ऐसा विशाल आयोजन था, जिसमें असंख्य प्रचलित पाठशालायें देशभर में फैली हुई थीं। प्रायः प्रत्येक ग्राम में अपना स्कूल या पाठशाला थी। कहा जाता है कि 1835 के आसपास, केवल बंगाल में इस प्रकार की एक लाख पाठशालायें थीं।

एडम की रिपोर्ट में दिये हुए आँकड़ों के सम्बन्ध में बहुत मतभेद है। सर फिलिप हरटॉग (Sir Philip Hartog) ने इनको केवल कल्पना माना है। इसके विपरीत, वार्ड (Ward), परांजपे (Paranjpe), पारूलेकर (Parulekar) के मतानुसार ये आँकड़े पूर्णरूप से सत्य हैं।

(2) एडम की द्वितीय रिपोर्ट—एडम की द्वितीय रिपोर्ट अधिक विस्तृत है। इसमें राजशाही जिले में थाना नटौर की शिक्षा-सम्बन्धी जाँच का वर्णन है। इस थाने की जनसंख्या 1,95,296 और ग्रामों की संख्या 458 थी। इतनी विशाल जनसंख्या के लिये केवल 27 प्राइमरी स्कूल थे, जिसमें 262 विद्यार्थी पढ़ते थे। इन स्कूलों में बंगला के 10, फारसी के 4, अरबी के 11 और बंगला तथा फारसी के 2 स्कूल थे। पाठशालाओं की शिक्षा की अपेक्षा व्यक्तिगत रूप से शिक्षा देने का प्रचार कहीं अधिक था, क्योंकि 238 ग्रामों में 1,588 परिवार ऐसे थे जो बच्चों को घर पर ही शिक्षा देते थे। बालक साधारणतः 8 वर्ष की आयु से 14 वर्ष की आयु तक पाठशालाओं में पढ़ते थे। अध्यापकों का औसत मासिक वेतन 5 रु० 8 आना था। स्त्री-शिक्षा का पूर्ण अभाव था।

Scanned with CamScanner

(3) एडम की तृतीय रिपोर्ट—एडम की तृतीय रिपोर्ट, प्रथम दो रिपोर्टों से अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसमें मुर्शिदाबाद, बीरभूम, बर्दवान, दक्षिणी बिहार और तिरहुत जिलों के शिक्षा-सम्बन्धी आँकड़े दिये गये। इन जिलों में 2,567 विद्यालय थे, जिनमें बंगला, हिन्दी, संस्कृत, फारसी और अरबी की शिक्षा दी जाती थी। इसमें 8 विद्यालय अंग्रेजी की और 6 बालिकाओं की शिक्षा के लिये थे, जिनमें क्रमशः 242 लड़के और 214 लड़कियाँ पढ़ रही थीं।

विद्यालयों के पास आय के निश्चित साधन नहीं थे। जो कुछ धन इन्हें जमींदारों, ताल्लुकेदारों आदि से मिल जाता था, उसी से ये चलते थे। कुछ धनी व्यक्ति अपने घरों पर ही पाठशालायें खुलवा देते थे। हिन्दू विद्यार्थी प्रायः बंगला, हिन्दी और संस्कृत का तथा मुसलमान फारसी और अरबी का अध्ययन करते थे। स्त्री-शिक्षा का प्रचार केवल कुछ उदार विचार वाले और धनी हिन्दू परिवारों में था। मुसलमानों में स्त्री-शिक्षा को अशुभ समझा जाता था।

एडम बेप्टिस्ट मिशन का मान्य सदस्य तथा सच्चा जनसेवक था। भारतीयों के नैतिक एवं सामाजिक पतन को देखकर उसका हृदय द्रवित हो गया था। वह अन्तःकरण से शिक्षा प्रसार द्वारा उनका मानसिक विकास तथा चारित्रिक उत्थान चाहता था। अतः उसने शिक्षा-प्रसार तथा शिक्षा-सुधार के लिये निम्नांकित सुझाव दिये—

1. देशी भाषाओं में भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों के सहयोग से पाठ्य-पुस्तकों की क्रमबद्ध (Graded) माला का मुद्रण, प्रकाशन एवं वितरण किया जाये।
2. शिक्षालयों के अध्यापकों के कार्य के निरीक्षण एवं निर्देशन के लिये प्रत्येक जिले में निरीक्षक नियुक्त किये जायें।
3. शिक्षकों की दीक्षा के लिये नार्मल स्कूलों का निर्माण किया जाये।
4. परीक्षायें नियमित रूप से एक निर्दिष्ट अवधि के अन्तर्गत ली जायें।
5. प्रत्येक ग्रामीण विद्यालय को अपना व्यय चलाने के लिये भूमि-दान दिया जाये।
6. कृषि-शिक्षा के लिये विभिन्न स्थानों पर प्रयोगात्मक (Experimental) फार्म बनाये जायें।
7. इस योजना को कार्यान्वित करने के लिये कुछ जिलों को चुन लिया जाये।

एडम को विश्वास था कि उसकी इस योजना को राष्ट्रीय व्यवस्था को आधारभूत योजना बनाया जा सकता था। उसकी इच्छा थी कि सरकार इस योजना पर क्रियात्मक पग उठाये। परन्तु मैकॉले ने उसकी सब आशाओं पर पानी फेर दिया। उसने इस योजना के विरुद्ध अति दूषित रिपोर्ट भेजी। परिणामतः जब वह ऑकलैण्ड के समक्ष रखी गई, तो उसने इसे अस्वीकृत कर दिया।

विवाद का अन्त, 1839
(END OF CONTROVERSY, 1839)

"विज्ञप्ति" ने सरकार की शिक्षा-नीति को निश्चित दिशा तो प्रदान कर दी, पर वह प्राच्य-पाश्चात्य विवाद का अन्त न कर सकी। उसके प्रकाशन के तेरह दिन बाद ही लार्ड बैंटिंक ने अपनी जन्मभूमि के लिये प्रस्थान किया। उसके प्रस्थान करते ही प्राच्यवादी दल ने अपना आन्दोलन पुनः प्रारम्भ कर दिया। उसके पश्चात् जब लार्ड ऑकलैंड (Auckland) ने भारत के गवर्नर-जनरल का पद सम्भाला, तब उसने "प्राच्य-पाश्चात्य विवाद" को अत्यन्त गम्भीर रूप में पाया। उसने लगभग चार वर्ष तक इस विवाद के कारणों का सतर्कता से अध्ययन किया। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि विवाद का मूल कारण यह था कि सरकार द्वारा प्राच्य-शिक्षा पर कम धन व्यय किया जा रहा था।

ऑकलैंड को विश्वास था कि यदि प्राच्य-शिक्षा पर कुछ धन और व्यय कर दिया जाये, तो प्राच्यवादी अपना आन्दोलन स्थगित कर देंगे। अपने इसी विश्वास के आधार पर उसने 24 नवम्बर, 1839 को अपना प्रसिद्ध "विवरण-पत्र" प्रकाशित किया। इस "विवरण-पत्र" में उसने प्राच्यवादियों को प्रति वर्ष 31 हजार रुपये की अतिरिक्त धनराशि देने की घोषणा की। इस घोषणा ने प्राच्यवादियों

Scanned with CamScanner

को प्रसन्न कर दिया। फलस्वरूप, लम्बे काल से चले आने वाले विवाद का अन्त हो गया। **डॉ० एस० एन० मुकर्जी** के शब्दों में—**"लार्ड ऑकलैंड को इस बात का अभिमान था कि उसने 31,000 रुपये प्रति वर्ष की मामूली रकम अधिक व्यय करके, उत्तेजित विवाद का अन्त कर दिया।"**

निस्यन्दन-सिद्धान्त
(FILTRATION THEORY)

1. सिद्धान्त का अर्थ—अंग्रेजी के "Filtration" शब्द का अर्थ है—"निस्यन्दन" अर्थात् "छानने की क्रिया"। व्यापारियों की कम्पनी होने के कारण वह भारतीयों की शिक्षा पर कम-से-कम धन व्यय करना चाहती थी। अतः उसने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि शिक्षा का नियोजन केवल उच्च वर्गों के लिये किया जाये, क्योंकि शिक्षा इन वर्गों के व्यक्तियों से छन-छन कर स्वयं ही निम्न वर्गों के व्यक्तियों तक पहुँच जायेगी। इस सिद्धान्त के अर्थ का स्पष्टीकरण करते हुए **अरथर मेह्यू** ने लिखा है—**"शिक्षा ऊपर से प्रवेश करके, जनसाधारण तक पहुँचनी थी। लाभप्रद ज्ञान, भारत के सर्वोच्च वर्गों से बूँद-बूँद करके नीचे टपकना था।"**

"Education was to permeate the masses from above. Drop by drop from the Himalayas of the Indian life useful information was to trickle downwards."

—**Arthur Mayhew :** *The Education of India*, p. 92.

2. सिद्धान्त के समर्थक—"निस्यन्दन-सिद्धान्त" के समर्थकों में थे—ईसाई मिशनरी, बम्बई के गवर्नर की कौंसिल का सदस्य, फ्रांसिस वार्डन (Francis Warden), कम्पनी के संचालक और मैकाले।

(i) ईसाई-मिशनरियों का आग्रह था कि यदि भारत के उच्च वर्गों के हिन्दुओं को अंग्रेजी शिक्षा देकर ईसाई-धर्म का अवलम्बी बना लिया जायेगा, तो निम्न वर्गों के व्यक्ति उनके उदाहरण से प्रभावित होकर स्वयं ही ईसाई धर्म में दीक्षित हो जायेंगे।

(ii) फ्रांसिस वार्डन ने 23 दिसम्बर, सन् 1823 के अपने "विवरण-पत्र" में यह विचार व्यक्त किया—**"बहुत-से व्यक्तियों को थोड़ा-सा ज्ञान देने की बजाय थोड़े-से व्यक्तियों को बहुत-सा ज्ञान देना अधिक उत्तम और निरापद है।"**

(iii) कम्पनी के संचालकों ने 29 सितम्बर, सन् 1830 के अपने "आदेश-पत्र" में मद्रास के गवर्नर को यह परामर्श दिया—**"शिक्षा की प्रगति उसी समय हो सकती है, जब उच्च वर्ग के उन व्यक्तियों को शिक्षा दी जाये, जिनके पास अवकाश है और जिनका अपने देश के निवासियों पर प्रभाव है।"**

(iv) मैकाले ने अपने सन् 1835 के "विवरण-पत्र" में "निस्यन्दन-सिद्धान्त" का समर्थन करते हुए लिखा—**हमें इस समय एक ऐसे वर्ग का निर्माण करने का पूरा-पूरा प्रयत्न करना चाहियो, जो हमारे और उन लोगों के बीच में दुभाषिये का काम करे, जिन पर हम शासन करते हैं।"**

3. ऑकलैंड द्वारा सिद्धान्त की स्वीकृति—भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल, लार्ड ऑकलैंड ने "निस्यन्दन-सिद्धान्त" को शिक्षा की सरकारी नीति के रूप में स्वीकार किया और 24 नवम्बर, सन् 1839 के अपने "विवरण-पत्र" द्वारा अग्रांकित घोषणा की—**"सरकार के प्रयास, समाज के उन उच्च वर्गों में उच्च शिक्षा का प्रसार करने तक सीमित रहने चाहिये, जिनके पास अध्ययन के लिये अवकाश है और जिनकी संस्कृति छन-छन कर जनसाधारण तक पहुँचेगी।"**

"Attempts of Government should be, restricted to the extension of higher education to the upper classes of society who have leisure for study and whose culture would filter down to the masses."

—**Auckland's** *Minutes*, 1839

वुड का आदेश-पत्र, 1854
(WOOD'S DESPATCH, 1854)

भारतीय शिक्षा में इतिहास में सन् 1833 से 1853 की अवधि को शिक्षा के अंग्रेजीकरण की

Scanned with CamScanner

अवधि कहा जाता है। बैंटिंक की सन् 1835 की "विज्ञप्ति" ने अंग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार को सरकार की शिक्षा-नीति बताया। इस नीति को व्यावहारिक रूप प्रदान करने के लिये "लोक-शिक्षा समिति" ने अंग्रेजी की शिक्षा देने के लिये, संस्थाओं का नवनिर्माण किया। सन् 1833 के "आज्ञा-पत्र" ने भारत के सिंहद्वार सब देशों के मिशनरियों के लिये खोल दिये। अतः अंग्रेज मिशनरियों के अलावा अन्य देशों के मिशनरियों ने भी भारत में अंग्रेजी की शिक्षा के लिये मिशन स्कूलों और कॉलेजों की स्थापना की।

इन सब कार्यों के फलस्वरूप सन् 1853 के अन्त तक भारत में अंग्रेजी के माध्यम से अंग्रेजी शिक्षा का आधिपत्य स्थापित हो गया। इस अवधि की इन दो विशेषताओं के साथ-साथ कुछ अन्य विशेषताओं का उल्लेख करते हुए, **श्रीधरनाथ मुखोपाध्याय** ने लिखा है—**"शिक्षा छनाई सिद्धान्त का बोलबाला रहा, जन-शिक्षा असम्भव गिनी गई एवं देशी शिक्षा कुचल दी गई, पाश्चात्य शिक्षा का आदर बढ़ा, प्राच्य विद्या निरर्थक मानी गई, शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी हुआ, संस्कृत एवं लोकभाषाएँ निकम्मी ठहराई गईं।"**

वुड के आदेश-पत्र का मूल कारण
(ORIGIN OF WOOD'S DESPATCH)

सन् 1853 में इंगलिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के "आज्ञा-पत्र" के पुनरावर्तन का अवसर आया। उस अवसर पर ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने यह निश्चय किया कि भारतीय शिक्षा की प्रमुख समस्याओं का समाधान किया जाना अनिवार्य था। इस विचार से प्रेरित होकर, पार्लियामेण्ट ने एक "जाँच-समिति" की नियुक्ति की और उसे भारतीय शिक्षा के सम्बन्ध में अपने सुझाव देने का आदेश दिया। इस "समिति" के सुझावों के आधार पर कम्पनी के संचालकों ने 19 जुलाई, सन् 1854 को एक आदेश-पत्र में अपनी भारतीय शिक्षा की नीति का प्रकाशन किया। उस समय सर चार्ल्स वुड (Sir Charles Wood) कम्पनी के "बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल" (Board of Control) का सभापति था। अतः आदेश-पत्र को उसी के नाम पर **"वुड का आदेश पत्र"** (Wood's Despatch) कहा गया। यह सौ अनुच्छेदों का लम्बा लेख-पत्र है, जिसमें भारतीय शिक्षा के अंग-प्रत्यंगों पंर विचार किया गया है और उसके सम्बन्ध में विस्तृत एवं महत्त्वपूर्ण सिफारिशें की गई हैं।

आदेश-पत्र के सुझाव व सिफारिशें
(SUGGESTIONS & RECOMMENDATIONS OF THE DESPATCH)

हम "वुड के आदेश पत्र" में लिखित महत्त्वपूर्ण सिफारिशों का निम्नांकित स्तम्भों में क्रमबद्ध वर्णन कर रहे हैं—

1. शिक्षा का उत्तरदायित्व (Responsibility of Education)—"आदेश-पत्र" में यह स्वीकार किया गया कि भारत में शिक्षा का प्रसार करने का उत्तरदायित्व कम्पनी पर है। इस उत्तरदायित्व को पुनीत कर्त्तव्य बताते हुए, **"आदेश-पत्र"** में कहा गया—**"अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों में से कोई भी विषय हमारे ध्यान को इतना आकृष्ट नहीं करता है, जितना कि शिक्षा। यह हमारे सबसे अधिक पुनीत कर्त्तव्यों में से एक है।"**

2. शिक्षा के उद्देश्य (Aims of Education)—"आदेश-पत्र" ने भारतीयों की शिक्षा के अग्रांकित चार उद्देश्य घोषित किये—(1) भारतीयों में शिक्षा का प्रसार करके, उनकी मानसिक और चारित्रिक उन्नति करना, (2) भारतीयों को पाश्चात्य ज्ञान से अवगत कराके, उनकी भौतिक समृद्धि करना, (3) भारतीयों को राजपदों के लिये सुयोग्य व्यक्ति बनाना और (4) भारतीयों को अपने देश को समृद्धशाली बनाने में सहायता देना।

3. पाठ्यक्रम (Curriculum)—"आदेश-पत्र" ने अरबी, फारसी और संस्कृत को उपयोगी बताते हुए, उनको पाठ्यक्रम में स्थान दिया। किन्तु, भारतीयों के लिये यूरोप के समुन्नत कला-कौशल, विज्ञान, दर्शन और साहित्य को अधिक उपयोगी बताकर, पाठ्यक्रम में विशेष स्थान प्रदान

Scanned with CamScanner

किया गया। इन विषयों को यूरोपीय ज्ञान की संज्ञा देते हुए, **"आदेश-पत्र"** में घोषित किया गया— **"हम बलपूर्वक घोषित करते हैं कि हम भारत में जिस शिक्षा का प्रसार देखना चाहते हैं, वह है— यूरोपीय ज्ञान।"**

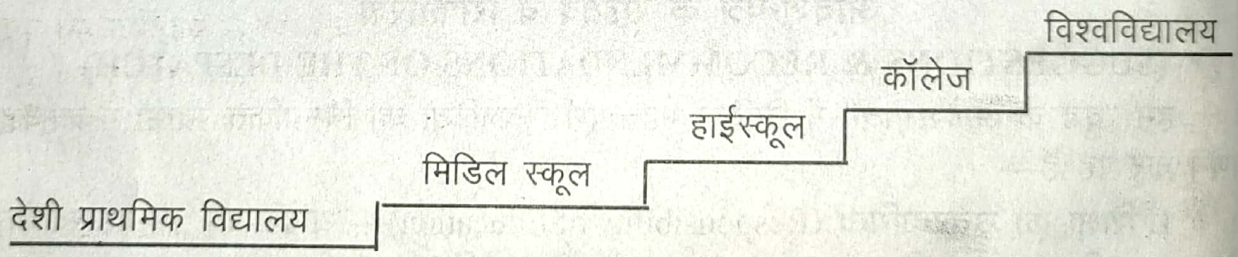
4. शिक्षा का माध्यम (Medium of Instruction)—"आदेश-पत्र" ने अंग्रेजी का समुचित ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों के लिये अंग्रेजी को और अन्य व्यक्तियों के लिये देशी भाषाओं को शिक्षा का माध्यम निश्चित किया। इस प्रकार, अंग्रेजी और देशी भाषाओं—दोनों को शिक्षा का माध्यम निश्चित करते हुए, **"आदेश-पत्र"** ने यह आशा प्रकट की—**"हम यूरोपीय ज्ञान के प्रसार के लिये अंग्रेजी भाषा और भारत की देशी भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में साथ-साथ देखने की आशा करते हैं।"**

"We look to the English language and to the Vernacular languages of India together as the media for the diffusion of European knowledge." —**Wood's** *Despatch*

5. शिक्षा-विभागों की स्थापना (Establishment of Education Department)—"आदेश-पत्र" ने सुझाव दिया कि प्रान्तीय बोर्डों और शिक्षा-समितियों (Provincial Boards & Councils of Education) को भंग करके भारत के पाँचों प्रान्तों (पंजाब, बंगाल, मद्रास, बम्बई और उत्तरी-पश्चिमी प्रदेश) में एक-एक लोक-शिक्षा विभाग (Department of Public Instruction) की स्थापना की जाये। इस विभाग के संचालन का सम्पूर्ण भार लोक शिक्षा-संचालक (Director of Public Instruction) पर रखा जाये। उसे अपने कार्य में सहायता देने के लिये उपशिक्षा-संचालकों, विद्यालय-निरीक्षकों और सहायक विद्यालय-निरीक्षकों की पर्याप्त संख्या में नियुक्ति की जाये।

6. विश्वविद्यालयों की स्थापना (Establishment of Universities)—"आदेश-पत्र" में भारतीयों को उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिये मद्रास, बम्बई और कलकत्ता में विश्वविद्यालय स्थापित करने की आज्ञा दी गई। "आदेश-पत्र" में कहा गया कि इन विश्वविद्यालयों का संगठन, लन्दन विश्वविद्यालय को आदर्श मानकर किया जाये जो उस समय केवल परीक्षण-संस्था थी।

7. क्रमबद्ध संस्थाओं की स्थापना (Establishment of Graded Institutions)—"आदेश-पत्र" में यह मत प्रकट किया गया कि सम्पूर्ण भारत में क्रमबद्ध शिक्षा-संस्थाओं की योजना को क्रियान्वित किया जाये। "आदेश-पत्र" ने इन संस्थाओं के स्वरूप को इस प्रकार निश्चित किया—



8. जन-शिक्षा का विस्तार (Expansion of Mass Education)—"आदेश-पत्र" में यह निस्संकोच रूप से स्वीकार किया गया कि कम्पनी ने "निस्यन्दन सिद्धान्त" का अनुसरण करके, जनसाधारण की शिक्षा की पूर्ण उपेक्षा की है। अतः 'आदेश-पत्र' ने यह सिफारिश की कि सरकार प्राथमिक शिक्षा पर अधिक धन व्यय कर, प्रत्येक जिले में स्कूलों की स्थापना करे, देशी विद्यालयों का सुधार करे और मेधावी एवं निर्धन छात्रों के लिये छात्रवृत्तियों की व्यवस्था करे, ताकि उनको निम्नतम स्तर से उच्चतम स्तर तक शिक्षा प्राप्त करने में सुविधा मिले।

9. सहायता-अनुदान-प्रणाली (Grand-in-Aid-System)—'आदेश-पत्र' ने भारत में जन-शिक्षा-कार्य को सफल बनाने के उद्देश्य से शिक्षा-संस्थाओं को आर्थिक सहायता देने के लिये 'सहायता-अनुदान-प्रणाली' को प्रचलित करने का सुझाव दिया। उसने यह भी सुझाव दिया कि भवन-निर्माण, छात्रवृत्तियों, पुस्तकालयों, प्रयोगशालाओं, अध्यापकों के वेतन आदि के लिये भी अलग-अलग अनुदान दिये जायें। 'सहायता-अनुदान-प्रणाली' की रूपरेखा का संकेत देते हुए, **'आदेश-पत्र'** में यह वाक्य

Scanned with CamScanner

अंकित किया गया—**"हमने भारत में उसी सहायता-अनुदान प्रणाली को अपनाने का निश्चय किया है, जो इस देश में अत्यधिक सफलता से सम्पादित की गई है।"**

"We have resolved to adopt in India the system of grant-in-aid which has been carried out in this country (England) with very great success." —**Wood's** *Despatch*

10. अध्यापकों का प्रशिक्षण (Training of Teachers)—'आदेश-पत्र' ने इस बात पर बल दिया कि अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिये विभिन्न प्रकार की प्रशिक्षण-संस्थाओं का शिलान्यास किया जाये। 'आदेश-पत्र' ने यह इच्छा व्यक्त की कि छात्रों को प्रशिक्षण-काल में छात्रवृत्तियाँ एवं शिक्षकों को उत्तम वेतन देकर, शिक्षा के व्यवसाय को आकर्षक बनाने की चेष्टा की जाये।

11. व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education)—'आदेश-पत्र' में व्यावसायिक शिक्षा की चर्चा करते हुए कहा गया कि भारत में ऐसे स्कूलों और कॉलेजों की सृष्टि की जाये, जिनमें छात्रों को विभिन्न व्यवसायों की शिक्षा ग्रहण करने की सुविधा मिल सके।

12. स्त्री-शिक्षा (Female Education)—'आदेश-पत्र' में यह सिफारिश की गई कि स्त्री-शिक्षा को उदारतापूर्वक सहायता-अनुदान देकर प्रोत्साहित किया जाये। 'आदेश-पत्र' में उन व्यक्तियों की सराहना की गई, जिन्होंने स्त्री-शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिये धन दिया था।

13. मुसलमानों की शिक्षा (Education of Muslims)—'आदेश-पत्र' में यह स्वीकार किया गया कि मुसलमानों की शिक्षा पिछड़ी हुई दशा में थी। अतः उसने दृढ़तापूर्वक कहा कि कम्पनी के अधिकारियों को मुसलमानों की शिक्षा का विस्तार करने के लिये विशेष प्रयत्न करने चाहिये।

14. प्राच्य-साहित्य व देशी भाषाओं को प्रोत्साहन (Encouragement to Oriental Literature & Vernacular Languages)—'आदेश-पत्र' में यह अभिलाषा अक्षरबद्ध की गई कि प्राच्य-साहित्य और देशी भाषाओं को प्रोत्साहित किया जाये। इसके अतिरिक्त, उसमें यह अभिलाषा भी लिपिबद्ध की गई कि देशी भाषाओं में पुस्तकों की रचना करवाई जाये, उनके लेखकों को उत्तम पारिश्रमिक दिया जाये और पाश्चात्य विज्ञान एवं साहित्य की पुस्तकों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद करवाया जाये।

15. शिक्षा व रोजगार (Education and Employment)—'आदेश-पत्र' ने इस बात पर बल दिया कि अंग्रेजी शिक्षा-प्राप्त व्यक्तियों को सरकारी नौकरियाँ दी जायें। इस सम्बन्ध में कम्पनी के संचालकों की इच्छा को 'आदेश-पत्र' में अग्रांकित शब्दों में व्यक्त किया गया—**"जो बात हम चाहते हैं, वह यह है कि यदि सरकारी नौकरियों के लिये उम्मीदवारों की अन्य योग्यतायें समान हों तो उस व्यक्ति की तुलना में जिसने अंग्रेजी की अच्छी शिक्षा प्राप्त नहीं की है, उस व्यक्ति को वरीयता दी जाये, जिसने अच्छी शिक्षा प्राप्त की है।"**

"What we desire is that, when other qualifications of the candidates for appointments under government are equal, a person who has received a good education should be preferred to one-who has not." —**Wood's** *Despatch*

आदेश-पत्र का मूल्यांकन
(ESTIMATE OF THE DESPATCH)

'वुड के आदेश-पत्र' का निष्पक्ष मूल्यांकन करने के लिये उसके गुणों और दोषों का अवलोकन करना वांछनीय है। अतः हम संक्षेप में उनका उल्लेख कर रहे हैं; यथा—

(1) गुण (Merits)—'आदेश-पत्र' के प्रमुख गुण अधोलिखित हैं—

1. 'आदेश-पत्र' ने भारतीय शिक्षा के उद्देश्य का स्पष्टीकरण किया, शिक्षा की नीति का निर्धारण किया और शिक्षा को निश्चित दिशा प्रदान की।

2. 'आदेश-पत्र' ने प्राथमिक स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा के प्रति ध्यान देकर, क्रमबद्ध शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना का सुझाव दिया।

Scanned with CamScanner

3. 'आदेश-पत्र' ने 'निस्यन्दन सिद्धान्त' को सर्वथा अनुपयुक्त बताकर, जन-शिक्षा को प्रोत्साहन देने वाले सिद्धान्त को मान्यता प्रदान की।

4. 'आदेश-पत्र' ने भारतीय भाषाओं के महत्त्व को स्वीकार करके उनको माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षा के माध्यम के पद पर प्रतिष्ठित किया।

5. 'आदेश-पत्र' ने भारतीय साहित्य की उपयोगिता को स्वीकार करके, उसको पाठ्यक्रम में उचित स्थान प्रदान किया।

6. 'आदेश-पत्र' ने लोक-शिक्षा-विभागों, प्रशिक्षण-संस्थाओं और विश्वविद्यालयों के नवनिर्माण का सुझाव देकर, भारतीय शिक्षा को विकसित और संगठित करने का उद्योग किया।

7. 'आदेश-पत्र' ने व्यावसायिक शिक्षा के लिये स्कूलों और कॉलेजों की स्थापना का प्रस्ताव प्रस्तुत करके, देश में बढ़ती हुई बेकारी की समस्या का समाधान करने की चेष्टा की।

8. 'आदेश-पत्र' ने स्त्रियों और मुसलमानों की शिक्षा का विस्तार करना सरकार का कर्त्तव्य बताकर, उनकी शिक्षा का मार्ग प्रशस्त करने में योग दिया।

9. 'आदेश-पत्र' ने सब प्रकार की शिक्षा-संस्थाओं के लिये सहायता-अनुदान प्रणाली का अनुमोदन करके, भारतीय शिक्षा के प्रसार में सहायता की।

(2) दोष (Defects)—उपरिवर्णित गुणों से हमें इस भ्रम में नहीं पड़ना चाहिये कि 'आदेश-पत्र' दोषमुक्त था। वस्तुतः उसमें अनेक स्पष्ट दोष थे; यथा—

1. 'आदेश-पत्र' ने शिक्षा पर राज्य का पूर्ण आधिपत्य स्थापित कर दिया। फलस्वरूप, चिरकाल से चले आने वाले स्वतन्त्र शिक्षण-कार्य का अन्त हो गया।

2. 'आदेश-पत्र' ने अंग्रेजी शिक्षित व्यक्तियों को सरकारी नौकरियों में प्राथमिकता दिये जाने का आदेश अंकित किया। फलतः प्राच्य-शिक्षा, साहित्य और विद्यालयों का अस्तित्व संकट में पड़ गया।

3. 'आदेश-पत्र' ने अंग्रेजी की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य सरकारी नौकरियाँ प्राप्त करना निर्धारित किया। इस उद्देश्य को निर्धारित करके 'आदेश-पत्र' ने शिक्षा के व्यापक उद्देश्य को नष्ट कर दिया।

4. 'आदेश-पत्र' ने भारतीय शिक्षा को पूर्णतया विदेशी रंग में रँग दिया और भारतीयों को उसे ग्रहण करने के लिये राजपदों का प्रलोभन दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि भारतीयों का अपने देश की शिक्षा प्रणाली से सम्बन्ध-विच्छेद हो गया।

5. 'आदेश-पत्र' ने अंग्रेजी को उच्च एवं माध्यमिक शिक्षा का माध्यम बना दिया। अतः शिक्षा-संस्थाओं में प्राच्य-भाषाओं का गौण स्थान हो गया।

6. 'आदेश-पत्र' ने जिस शिक्षा प्रणाली का अनुमोदन किया, उसमें परीक्षाओं का स्थान सर्वोपरि था। अतः छात्रों का एकमात्र उद्देश्य ज्ञान का अर्जन करना न होकर, परीक्षा में उत्तीर्ण होना हो गया।

7. 'आदेश-पत्र' ने भारतीय विश्वविद्यालयों को लन्दन विश्वविद्यालय के आदर्श पर संगठित किये जाने का निर्देश दिया। इस निर्देश के फलस्वरूप भारत में प्राचीन विश्वविद्यालय की परम्पराओं की पूर्ण उपेक्षा की गई।

8. 'आदेश-पत्र' ने अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाकर, भारतीय छात्रों का महान् अहित किया। इसका कारण यह था कि इन छात्रों के लिये अंग्रेजी के माध्यम से सब विषयों की गहराई तक पहुँचकर, उनका पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना असम्भव था।

9. 'आदेश-पत्र' ने शिक्षा की परिधि में से धर्म को निकालकर उसे पूर्णतया लौकिक बना दिया।

आलोचकों की सम्मतियाँ
(VIEWS OF CRITICS)

सन् 1854 के 'आदेश-पत्र' के उल्लिखित गुणों से मुग्ध होकर, कुछ आलोचकों ने उसकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। उनके विपरीत, 'आदेश-पत्र' के दोषों से क्षुब्ध होकर, कुछ आलोचकों ने

Scanned with CamScanner